इस्लाम और नई साइन्सों की शिक्षा

डॉ० मौलाना सय्यद कल्बे सादिक़ साहब

करुआने मजीद ने इन्सान की सृष्टि का उद्देश्य **(ख़िल्क़त का मक़सद)** उपासना या इबादत बताया है। ग़रज़ और उद्देश्य अपने वसायल या साधनों से बलन्द और बहुत ऊँचे होते हैं। इसलिए इस्लाम में इबादत का जो मर्तबा और स्थान है वह स्पष्ट है, वाज़िह है। मगर जब ख़ुदा ने वर्तमान पीढ़ी के जनक हज़रत आदम को पैदा किया तो एअ्लान किया कि, **"मैं ज़मीन पर एक "ख़लीफ़ा" (प्रतिनिधि) बनाने वाला हूँ"**

इस अवसर पर फ़िरिश्तों ने **ख़िलाफ़ते इलाहिया** (ईश्वरीय प्रतिनिधित्व) के लिए अपना हक़ और अधिकार जताने के लिए अपने सद्गुण **(सिफ़ते कमाल)** के रूप में **"उपासना"** को पेश किया। उधर दूसरी तरफ़ से आदम का सद्गुण **"ज्ञान"** पेश किया गया। और फिर वह इबादत **"जो सृष्टि का उद्देश्य यानी ख़िल्क़त की ग़रज़ है"** इल्म और ज्ञान के मुक़ाबले में आई तो वास्तविक उपास्य, हक़ीक़ी मस्जूद ने फ़िरिश्तों को हुक्म दिया कि, **"तुम सब आदम के सामने सज्दे में गिर जाओ"** यानी इबादत से इल्म को, उपासना से ज्ञान को सज्दा कराया गया।

कुरआन ने जैसा कि बताया है और **"मासूमीन"** (निष्पाप महापुरूषों) के शुभ कथनों में पाया जाता है कि सृष्टि की व्यवस्था का संचालन फ़रिश्ते कर रहे हैं। ज़मीन का चक्कर, चाँद के फेरे, पूरा सौर मण्डल फिर ज़मीन पर हवाओं, बरसातों, पहाड़ों पेड़ों, जानवरों और इन्सानों से मुतअल्लिक़ सभी **'तक्वीनी उमूर'** (सृष्टात्मक कार्य) फ़रिश्तों के ही हाथों अन्जाम दिये जाते हैं, निबटाये जाते है। बल्कि कुछ ऐसी व्याख्यायें, तशूरीहें मिलती हैं जिनसे नतीजा निकलता है कि सृष्टात्मक शक्तियों का ही नाम **'फ़रिश्ते'** है। इन्हीं फ़रिश्तों से सजदा कराके जैसे बताया जा रहा है कि ब्रह्माण्ड में कार फ़रमाँ कार्यपालक शक्तियों का सिर झुकाना है तो 'ज्ञान' ही का सहारा लेना।

कुरआने मजीद की बताई केवल इसी एक घटना से इस्लाम में ज्ञान की महत्ता का अनुमान किया जा सकता है।

हुज़ूर पैगम्बर (स०) पर जो पहली **'वह्य'** उतरी उसकी शुरूआत **'इक़रअ्'** (पढ़ो) से होती है। वह्य फिर आगे बढ़ती है तो **"इल्म और कलम"** ही का उल्लेख होता है। हज़रत पैग़म्बर (स०) के परलोक वास का समय प्रायः आ चुका है। मुसलमानों को सम्बोधित करके हुज़ूर के मुखारविन्दु से निकलने वाले अन्तिम शब्द भी वहीं है जिनमें **"क़लम"** और **"किताब"** की चर्चा है। यह रही इसलाम की शुरूआत भी क़लम से और इन्तिहा भी क़लम पर।

कुरआन से गुज़र के जब हम हदीसों तक पहुँचते हैं तो पहली हदीस जो सामने आती है वह यही है कि, **"ज्ञानार्जन" प्रत्येक मुसलमान मर्द-औरत पर वाजिब है अर्थात् अनिवार्य कर्तव्य है।"**

आम तौर से मालूम है कि इस्लाम की कुछ उपासनायें केवल मर्दों पर ही वाजिब हैं, औरतों पर नहीं, जैसे- **"जिहाद"** के रन में आना मर्दों पर वाजिब हो सकता है औरतों पर नहीं। जुमुअे की नमाज़ में शरीक होना मर्दों पर वाजिब है औरतों से साक़ित है यानी त्याज्य है। लेकिन **तलबे इल्म** (ज्ञानार्जन)एक ऐसा कर्तव्य है जिसमें लिंग्ता के भेद से कोई अन्तर नहीं पड़ता। यह जैसे मर्दों पर वाजिब है वैसे ही औरतों पर भी वाजिब है।

इस्लामी उपासनाओं के समय नियत हैं। नमाज़ का वक़्त निर्धारित है। इन ख़ास अवक़ात पर नमाज़ की अदाई हो जाये तो फिर दूसरे समय में नमाज़ वाजिब नहीं रहती। रोज़ा बस रमज़ान के महीने में वाजिब है। हज केवल ज़ी हिज्जा की ख़ास तारीख़ों में ही हो सकता है। फिर प्रत्येक उपासना बालिग़ यानी धर्मशास्त्र की दृष्टि से वयस्क होने पर ही वाजिब होती है उससे पहले नहीं। लेकिन ज्ञानार्जन के बारे में हुज़ूर पैग़म्बर (स०) की जो दूसरी हदीस सामने आती है वह यह है कि, **"ज्ञान पालने से क़ब्र तक बराबर अर्जित करते रहो"**

नतीजा यह निकला कि प्रत्येक उपासना का

समय नियत है परन्तु ज्ञानार्जन के लिए कोई वक़्त नियत नहीं। न इसके लिए कोई आयु-अवस्था की क़ैद है और न माह और साल का प्रतिबन्ध। जब तक जिंदा रहो ज्ञान अर्जित करते रहो इल्म हासिल करते रहो।

कुछ उपासनायें निश्चित स्थान ख़ास जगह पर ही अंजाम दी जा सकती हैं। हज को बस मक्के और उसके इर्द-गिर्द के कुछ स्थानों पर ही अंजाम दिया जा सकता है, कहीं और नहीं मगर ज्ञानार्जन के विषय में रसूल स० की तीसरी हदीस सामने आती है ''ज्ञान अर्जित करो चाहे तुमको चीन तक ही जाना पड़े इस हदीस ने बताया कि ''तलबे इल्म'' एक ऐसी इबादत है, ज्ञानार्जन एक ऐसी उपासना है जिसके लिए किसी ज़मीन की पाबन्दी नहीं, संसार के जिस खण्ड में मिले जाकर ले लो।

कुछ वह इबादतें है जिनके बजा लाने में हम दूसरों के मुहताज हैं यानी उन पर निर्भर हैं। जमाअत से नमाज़ हम तब तक पढ़ सकते ही नहीं जब तक कोई पढ़ाने वाला न हो। और इसमें भी शर्तें लगी हुई हैं जिनमें से कुछ यह हैं, कि नमाज़ पढ़ाने वाला मुसलमान मोमिन हो, मसअलों से अवगत हो, नेक-पर्हेज़गार, संयमी हो। मगर रसूल (स०) की चौथी हदीस सामने आती है जिसमें उल्लेख है कि, ''इल्म व हिकमत, ज्ञान-विज्ञान मोमिन की खोई हुई पूँजी हैं इसलिए इसे वह जहाँ पाता है ले लेता है'' यानी ज्ञान-विज्ञान अर्जित करने में दीन-धर्म, कुफ़्र-इस्लाम, विश्वसनीयता, भ्रष्टाचार का भी प्रतिबन्ध नहीं। हिन्दू से मिले, ईसाई से मिले, यहूदी से मिले ले लो।

इन **4** हदीसों का सारांश यह है कि इस्लाम की शिक्षा में ज्ञानार्जन ऐसा ज़बर्दस्त और हमाजिहत ज़रूरी फ़रीज़ा यानी ऐसा प्रबल ओर सर्वागीण अनिवार्य कर्तव्य है जिसमें न लिंग्ता का प्रतिबन्ध है न अवस्था का। न समय नियत है न देश निश्चित है और न जाति-धर्म का बन्धन है। मगर अचरज होता है कि जिस धर्म में ज्ञान पर इतना बल दिया गया था उसीके मानने वाले आज ज्ञान के क्षेत्र में सबसे पीछे हैं।

इस भूमिका के बाद आइये अब यह देखें कि इल्म और ज्ञान पर जो यह ज़ोर दिया गया है तो इस इल्म से मुराद ज्ञान से अभिप्राय कौन सा ज्ञान है ! हो सकता है किसी कोने से आवाज़ आये कि इससे सिर्फ़ **इल्मे दीन्** मात्र धर्म ज्ञान मुराद है। यानी इसका अभिप्राय केवल इस्लाम शास्त्र से है। मैं इसकी तरदीद इसका खण्डन नहीं करूंगा। लेकिन यह जवाबी सवाल ज़रूर करूंगा कि इस्लाम कुरआन और हदीस की नस यानी स्पष्ट कथन के रू से लोक-परलोक दोनों के कल्याण के लिए आया है या मात्र परलोक के कल्याण के लिए ? यह केवल मस्जिद का धर्म है या जीवन परिक्षेत्र का भी ? इसका उत्तर बस यही होगा कि इस्लाम लोक-परलोक दोनों के लिए है। और इसका कार्यक्षेत्र मस्जिद से निकल के जीवन परिक्षेत्र तक है। जब ऐसा है तो फिर **इल्मे दीन्** धर्म-ज्ञान की परिधि से भौतिक ज्ञान को कैसे निकाला जा सकता है?

मिंबर, मीलाद-मज्लिस के मंच पर आने वालों का कर्तव्य है कि वह यह बात समझ लें कि उनकी तर्कना की कोई हैसीयत नहीं रहती, अगर मासूम का कथन या कुरआन की आयत उनकी तर्कना के विरूद्ध जाती है। इसलिए मेरा कर्तव्य है कि इस तर्कना को मासूमीन के सदाचरण और कुरआन की आयतों से मिला कर देख लूँ कि मेरी तर्कना को वहाँ से पुष्टि मिल रही है या नहीं ?

हमारे पाँचवे इमाम हज़रत मो० बाकिर (अ०) का ज़माना है। आपका समकालीन उमवी बादशाह हिशाम बिन अब्दुल मलिक था। इस हिशाम को आप मामूली राजा या नवाब न समझें उसकी हुकूमत उस वक़्त की **'सुपर पावर'** थी जिसका एक सिरा यूरोप में था दूसरा सिंध (जो उस समय भारत में था) में। इस बादशाह की राजधानी दमिश्क़ थी। इसने बादशाह बनने के बाद हिजाज़ की प्रांतीय राजधानी मदीने के दौरे का प्रोग्राम बनाया, राज्यपाल द्वारा ज़ोरदार स्वागत की तय्यारियाँ हुई। बहुत शानदार दरबार सजाया गया। बादशाह से मिलने के लिए राज्य के कोने-कोने से क़बीलों के प्रमुख और नामी लोग आये। मगर हज़रत इमाम बाकिर (अ०) मदीने में तशरीफ़ रखने के बावजूद उससे मिलने नहीं गये। बादशाह को आश्चर्य हुआ। राज्यपाल से पूछा कि सब आये मगर मोहम्मद बिन अली (इमाम बाक़िर अ०) मुझसे मिलने के लिए नहीं आये? राज्यपाल ने बताया कि उपासना के समय के अलावा उनका अधिकतर समय मुसलमानों की शिक्षा में लगता है इसलिए उनका अपनी ज़िम्मेदारियाँ छोड़ के आना मुश्किल है। बादशाह ने कहा मैं भी देखना चाहता हूँ कि वह क्या पढ़ाते हैं। जब पता चला कि इमाम (अ०), हज़रत पैग़म्बर (स०) की मस्जिद में मुसलमानों को पढ़ाया

करते हैं तो बादशाह मस्जिदे नबवी में आया और एक स्तम्भ से लग के बड़ी देर तक सुनता रहा कि इमाम क्या पढ़ा रहे हैं। जब उसकी समझ में न आया तो उसने पूछा कि, **"आप क्या पढ़ रहे हैं ?** इमाम ने फ़रमाया कि, **"मैं मुसलमानों को इल्म-ए-हैय्यत (नक्षत्र ज्ञान, ASTRONOMY) और जुग़राफ़िया (भूगोल) का पाठ पढ़ा रहा हूं।"**

एक मासूम इमाम, पैग़म्बर की मस्जिद ऐसे पवित्रतम स्थान में उपासना के अलावा कोई दूसरा काम कर सकता ही नहीं। इसलिए इमाम (अ०) का पैग़म्बर की मस्जिद में **"माडर्न साइंसेज"** आधुनिक विज्ञान, का पढ़ाना इस बात का प्रमाण है कि साइंसेज़ का पढ़ाना हराम, वर्जित नहीं बल्कि ऐसी मुक़द्दस इबादत, पुनीत उपासना है जिसे रसूल की मस्जिद में बजा लाया जा सकता है।

मैं इससे पहले की मज्लिसों में अस्ट्रोनॉमी, इस्ट्रोफ़िज़िक्स, ज़ूलोजी, ज़ियालाजी, साइकालॉजी आदि से सम्बन्धित पुनीत इमामों विशेषकर हज़रत अमीरूल मोमिनीन (अ०) के आश्चर्यजनक सत्य कथन पेश कर चुका हूँ जिनका मतलब उस वक्त वाले समझ ही न सकते थे। अब जा के समझ में आना शुरू हुआ है। इन सद्कथनों से यह बात सिद्ध हो जाती है कि इन हज़रात के पास मौजूदा साइंसेज़ का भी ज़बर्दस्त ज्ञान था। प्रश्न यह उठता है कि यह ज्ञान उनके पास कहाँ से आया ? किसने पढ़ाया ? उस ज़माने में इन साइंसेज़ का जानने वाला ही वहाँ कहाँ था जो इनको पढ़ाता ! जवाब एक और मात्र एक है कि ख़ुदा ने पढ़ाया, इन्होंने पढ़ा। यानी जिन साइंसेज़ का पढना हराम बताया गया वह ऐसी अनिवार्य और पुनीत थीं कि ख़ुदा पढ़ाता है और मासूम इमाम पढ़ता है।

अब एक नज़र हमारी पाठशालाओं में पढ़ाय जाने वाले पाठ्यक्रम पर। दीनी मदारिस, धार्मिक पाठ्शालाओं की ऊँची कक्षाओं में पढ़ाई जाने वाली फ़िक़्ह, **उसूले फ़िक़्ह,** तफ़सीर और हदीस को पारिभाषिक रूप से इल्मे दीन, धर्म विद्या कहा जा सकता है। मगर क्या इन कक्षाओं में अरबी साहित्य नहीं पढ़ाया जाता ? इस अरबी साहित्य में इमरअल क़ैस का प्रेम रस वाला काव्य और अबूनुवास की सुरा विषयक कविता भी मुझे पढ़नी पड़ी थी। इस्लाम पूर्व काल की तवह्हुम परस्ती अर्थात् निराधार और काल्पनिक बातों पर विश्वास, को भी पढ़ना पड़ा था। इस्लाम तो ऐसी शायरी का प्रबल विरोधी है परन्तु हमारे धार्मिक पाठ्यक्रम में यह सब शामिल है। इसका जो कारण बताया जाता है वह भी ठीक है। इनको इसलिए पढ़ाया जाता है कि अरबी भाषा और मुहावरों पर अधिकार प्राप्त हो। ताकि हम क़ुरआन और हदीस के शब्दों को ज़ियादा अच्छे ढंग से समझ सकें मगर जिस तरह क़ुर्आन के शब्दों को अच्छे तरीके पर समझा जा सकता है अरबी साहित्य पर अधिकार प्राप्त होने से, वैसे ही आज के युग में क़ुरआन और हदीस की शास्त्रीय गहराइयों को बेहतर ढंग से समझा जा सकता है, नये विज्ञान और साइसेज़ पर अधिकार प्राप्त करने से।

इस थोड़े विस्तार के बाद आइये क़ुरआन को देखें। क़ुरआन मजीद में जगह-जगह चर्चा है कि दरिया, समुद्र हवायें, पृथ्वी, चांद, सूरज यह सब इंसान के लिए वंशीभूत कर दिये गये हैं। फिर यह भी इरशाद हुआ है कि ख़ुदा और रसूल (स०) के बाद दुनिया में वर्चस्व, शक्ति, सत्ता और सम्मान ईमान वालों का हक़ और उन्हीं का हिस्सा है। यह दुनिया कारणों का लोक है। हर गन्तव्य की एक राह निर्धारित है। आज के युग में ज़मीन आसमान पर अधिकार, सांसारिक वर्चस्व और नियन्त्रण, सम्मान और सत्ता उसी जाति को प्राप्त हो सकती है जिसके पास दौलत और साइंटिफ़िक नॉलिज हो, जो आधुनिक ज्ञान में सब से आगे हो। हरि इच्छा है कि मुसलमान अपमानित होकर न रहें इज़्ज़तदार बन कर रहें। दूसरों के मुहताज, आश्रित हो के न रहें, दूसरों से बेलाग, निस्पृह हो के रहें। यह सम्मान यह बेलाग पन आज के युग में धन, विज्ञान और टेक्नालॉजी के बिना उपलब्ध नहीं हो सकता। इसलिए हरि इच्छा की पूर्ति करना है तो धन कमाना है, साइंस और टेक्नालोजी में आगे बढ़ना है।

मगर मुसलमानों के पास ज्ञान की कमी, नतीजा यह हुआ कि दुनिया का ज्ञान उनके पास क्या होता ख़ुद उन दोनो शब्दों के अभिप्राय भी उनको नहीं मालूम जो उनकी ज़बान पर जारी रहा करते हैं। उन के कानों में **"ज़ुह्द"** (पर्हेज़गारी) का शब्द पड़ गया तो उन्होंने उसका अर्थ सन्यास समझा। सन्यास कोई सकारात्मक चीज़ नहीं, एक नकारात्मक चीज़ हैं। **"ज़ुह्द"** का अर्थ सन्यास नहीं, फ़क़ीरी नहीं, निर्धनता नहीं। नफ़्स और मन

पर नियन्त्रण हैं जिसे अपने मन पर नियन्त्रण प्राप्त हो गया उस का शोषण इस्तिहसाल (Expliotation) नहीं किया जा सकता। उसकी कमज़ोरी से लाभ उठा के उसे गुलाम नहीं बनाया जा सकता। ज़ुहद कीं तारीफ़, परिभाषा जो अमीरुल मोमिनीन ने फ़रमाई वह यह है कि, **''ज़ुहद व तक़्वा'', संयम और पर्हेज़गारी प्रत्येक प्रकार की गुलामी से मुक्ति की ज़िम्मेदार है।''** ग़रीबी और निर्धनता से गुलामी आती है। **'ज़ुहद'** से गुलामी जाती है परन्तु याद रखिये कि सत्ता और सम्मान तब प्राप्त होता है जब धन के साथ ज्ञान भी हो परन्तु ज्ञान हीन धर्म अभिशाप और अपमान बन जाता है।

अमरीका में यहूदी **3** प्रतिशत हैं। यहूदियों से उनके आचरण के कारण घृणा हैं। मगर बात सांसारिक सत्ता की है। अमरीका में हैं **3** ही प्रतिशत मगर इण्टर नेशनल बैकिंग पर क़बज़ा उनका, इण्टरनेशनल प्रेस पर क़ब्ज़ा उनका, अमरीकन लाबी पर कब्ज़ा उनका, अमरीका के राष्ट्रपति पर अधिकार उनका, हद यह कि बहुत से मुसलमान, बढ़े-चढ़े राजनैतिक नेता भी पर्दे के पीछे उनके हाथों बिके हुए हैं। हज़ारों मुसलमान क़त्ल भी हो जाये यहाँ न्यूज़ मीडिया में चर्चा तक नहीं, एक यहूदी मर जाये तो मुद्दतों उसका मातम हुआ करता है यह सब क्यो? मात्र इसलिए कि वह गिनती के हैं परन्तु दौलत और ज्ञान दोनों पर उनका एक साथ अधिकार है। जब दौलत और ज्ञान साथ होते हैं यहूदी उभरते हैं, जब धन, अज्ञान के साथ हो तो सऊदी उभरते हैं। इनके पास इज़्ज़त है उनके दामन में ज़िल्लत। इनके पास शक्ति है उनके पास माथा टिकाई। सऊदी और दूसरे अरब शेख़ जितना धन अपने ग़ैर इस्लामी बल्कि इस्लाम को बदनाम करने वाले भोग विलास पर ख़र्च कर रहे हैं। अगर उसका आधा हिस्सा भी दुनिया के निर्धन मुसलमानों पर व्यय होने लगे तो न कोई मुसलमान भूखा रह जाये, न बेघर रह जाये, न अनपढ़ रह जाये।

मैं अर्ज़ कर रहा था कि **''ज़ुहद व तक़्वा''** फ़क़ीरी नहीं है फ़क़ीरी से दुराचरण जन्म लेता है फ़क़ीर दूसरों का दास बन जाना है **''ज़ुहद व तक़्वा''** बे न्याज़ी बेलाग होने का नाम है, स्वतन्त्रता का नाम है, मन पर भरपूर नियन्त्रण का नाम हैं इस्लाम अगर आप को फ़क़ीर देखना चाहता तो जहाँ-जहाँ ''नमाज़ पढ़ों'' ज़कात दो'', आया है इन सब जगहों पर ''नमाज़ पढ़ो'' ''ज़कात लो'' आता। इस्लाम प्रत्येक नमाज़ी का हाथ ऊपर देखना चाहता है। किसी नमाज़ी का हाथ नीचे नहीं देखना चाहता।

बहरहाल इज़्ज़त और शक्ति प्राप्त करने के लिए फ़क़ीरी और अज्ञान का मिटाना ज़रूरी है। इसको मिटाये बिना न आप इज़्ज़त हासिलकर सकते हैं न शक्ति। अल्प संख्या में होने से कोई हानि नहीं होती। जाहिल और ग़रीब होने से मुसीबतें आती हैं।

छोड़िये यहूदियों को, स्वयं अपना इतिहास देख लें। मैं इस वक़्त बस अपने सम्प्रदाय के लोगों से बात कर रहा हूँ। हिन्दुस्तान पाकिस्तान में इस वक़्त आप करोड़ों की संख्या में हैं मगर सच पूछें तो न इज़्ज़त है न सम्मान न राजनैतिक अधिकार सुरक्षित हैं न धार्मिक। मगर मुग़ल काल में, अकबर के युग में आप की तादाद सम्भवतः केवल हज़ारों में रही होगी शायद लाख भी न रही हो। लेकिन उस वक़्त के अखण्ड भारत में आप के पास सम्मान भी था आदर भी। आप बादशाह न थे लेकिन **''बादशाहगर''** बादशाह बनाने वाले कहे जाते थे। क्यों ? बस इसलिए कि संख्या कम थी मगर ज्ञान अधिक था समझ ज़ियादा थी, प्रतिभा और बुद्धि अधिक थी।

मैं आपको सचेत किये देता हूँ कि आपकी आने वाली पीढ़ियाँ उच्च शिक्षा प्राप्त करके रहेंगी चाहे हिन्दुस्तान में हों चाहे पाकिस्तान में। या दुनिया के किसी हिस्से में। अगर आप ने उनकी शिक्षा में रूचि न ली तो ईसाई संस्थायें उनको पढ़ा देगी। ग़ैर मुस्लिम संगठन उनको पढ़येंगे। इन परिस्थितयों में वह पढ़ तो जायेंगे लेकिन इसके बाद ज़रूर सोचेंगे कि उनकी जाति ने, उनके धम्र ने उनको क्या दिया था ? अज्ञान, पिछड़ापना ईसाईयों ने, यहूदियों ने और ग़ैरों ने उनको क्या दिया ज्ञान और प्रगति। इन परिस्थितियों में अगर उनकी वफ़ादारियाँ इस्लाम से समाप्त हो जायें और वह ग़ैरों के प्रति निष्ठावान बन जायें या इस्लाम को छोड़ के दूसरे धर्म ग्रहण कर लें, तो इसके लिए भी आप को ख़ुदा की बारगाह में उत्तरदायी होना पड़ेगा।

आज का नियत समय समाप्त है इसलिए मसायब के ज़िक्र से पहले बस इतना अर्ज़ कर दूँ कि हज़रत अली बिन अबीतालिब ने फ़रमाया है कि, **''मुनष्य**

(बकिया पेज न० 12 पर ,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,)

हुए। हुस्ने इत्तिफाक़ से एक दिन किन्दी का एक शार्गिद हाज़िरे ख़िदमत हुआ इमाम (अ०) ने फ़रमाया कि कोई ऐसा नहीं है जो किन्दी को ये किताब लिखने से बाज़ रख सके मुलाकाती ने अर्ज़ की मौला हम शार्गिदों में लब कुशाई की मजाल कहाँ। हज़रत ने फरमाया जो मैं बताउँ क्या उस पर अमल कर सकते हो ? उसने अर्ज़ की जी हाँ ये तो हो सकता है इमाम ने फरमाया कि पहले उसकी ख़ूब खिदमत करके ख़ूसूसी तकर्रूब पैदा करो। जब वो तुमसे खुश हो जाये तब कहो मुझे एक इश्काल हो रहा है। आप इसे दफ्अ फ़रमा दें। जब उसकी इजाज़त दे दे तो कहो अगर कुरआन का मुतकल्लिम आपकी ख़िदमत में इसे लाये तो आप मुरादे मुतकल्लिम लाज़िमी तौर पर समझ लेगें ? आपका समझा हुआ मतलब और मुतकल्लिम की मुराद क़त्ई तौर पर एक होगी हस्हाक़ ने कहा नहीं ख़िलाफ भी हो सकता है तो शार्गिद ने कहा तब तनाकुज़ुल कुरआन लिखने से फ़ाएदा क्या हैं। किन्दी ने कहा ज़रा अपना इश्काल फिर दोहराओ शार्गिद ने फिर बयान किया किन्दी कुछ सोचने लगा और कहा तुम्हे क़सम है सचसच बताओ कि ये इअतिराज़ तुम्हें सिखाया किसने शार्गिद ने अर्ज़ की उस्तादे बुर्ज़गवार ये ख़ादिम के ही ज़ेहन की उपज है। इस्हाक ने कहा ''ये मै हरगिज़ न मानूगा तुम लोग कहाँ और ये इअतिराज़ कहाँ! सच कहो ये किसने सिखाया है ? शार्गिद ने अर्ज़ की हुज़ूर सच तो ये है कि मुझे इमाम हसन अस्करी (अ०) ने बताया है। इस्हाक़ ने कहा अब तुम ढ़र्रे पर आये हो। ये नुक्ते बस खाना ज़ादे नबूवत के ही बस के हैं। फिर उसने आग मंगवाई और जो लिखा पढ़ा था सब जलाकर ख़ाक कर दिया।

(हमारी तौहीद 1 जुलाई 1999 पेज न० 2 से)



रुबाई

देबले हिन्द मौलाना फ़रज़न्द हुसैन ज़ाख़िर इन्तेहादी

अहमद को जो अल्लाह ने शाही दे दी
हर चीज़ उन्हें ता महो माही दे दी
शक लाये जो एजाज़े नबी में काफ़िर
महताब ने दो होके गवाही दे दी



(बक़िया पेज न० 10 का,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,)

जिस बात से अनभिज्ञ होता है उसका दुश्मन हो जाता है।" इतने अच्छे ढंग से न सही मगर यह बात अंगेज़ी में भी कहीं गई। Fair of unknown वह डर जो किसी चीज़ के बारे में जानकारी न होने से पैदा होता है। खुली बात है कि ''डर'' दुश्मनी तक पहुँचा दिया करता है।

मैं पहले के अपने **''उलमा''** की सेवाओं और ज्ञान का क़द्रदां हूँ और रहूँगा। मगर इस क़द्रदानी के बावजूद मुझे पहले के आलिमों और मौजूदा आलिमों से यह गिला अवश्य है कि वह समस्या पर तब विचार करते हैं जब वह सम्मुख आकर खड़ी हो जाती है और चारों ओर से घेर लेती है। काम ऐसे नहीं चलेगा। समस्या आने से पहले उसके **मुज़मरात** (निहितार्थ) पर विचार कर लेना चाहिए और उसका निदान सोच लेना चाहिये। समस्या फट पड़ती है तो फ़ैसले चिन्तन से नहीं घबराहट से होते हैं।

बहरहाल साइंस का युग शुरू हुआ तो उस वक़्त के आलिम साइंस से अनभिज्ञ थे इसलिए उसके विरोधी हो गये। और साइंस एवं आधुनिक ज्ञान के विरूद्ध फ़तवे छप गये। इसका भुगतान हमारा समुदाय अभी तक भुगत रहा है। सब आगे निकल गये हम पीछे रह गये।

मगर जो ग़ल्ती उस वक़्त के दीनी आलिमों ने की थी वहीं आजकल के साइंसदां कर रहे हैं। वह साइंस से अपरिचित थे उन्होंने साइंस को धर्म का दुश्मन माना। यह मज़हब से अनभिज्ञ हैं इसलिए यह धर्म को साइंस विरोधी मानते हैं। हालाँकि न धर्म साइंस विरोधी है न साइंस धर्म विरोधी। यह एक दूसरे की पूर्ति करते हैं। यह दोनों मिल के जीवन में सन्तुलन बनाते हैं। सभ्यता और सांस्कृति की तेज़ रफतार गाड़ी में साइंस की हैसियत एक्सीलेटर और पहियों की है जिससे गाड़ी में गति आती है। मज़हब की हैसीयत ब्रेक और स्टियरिंग व्हील की है जिनके माध्यम से दुर्घटनाओं से बचा जाता है और सही दिशा में यात्रा होती है। साइंस न होगी तो हम सिकुड़ जायेंगे, मज़हब न रहा तो हम फट जायेंगे।

